श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 3

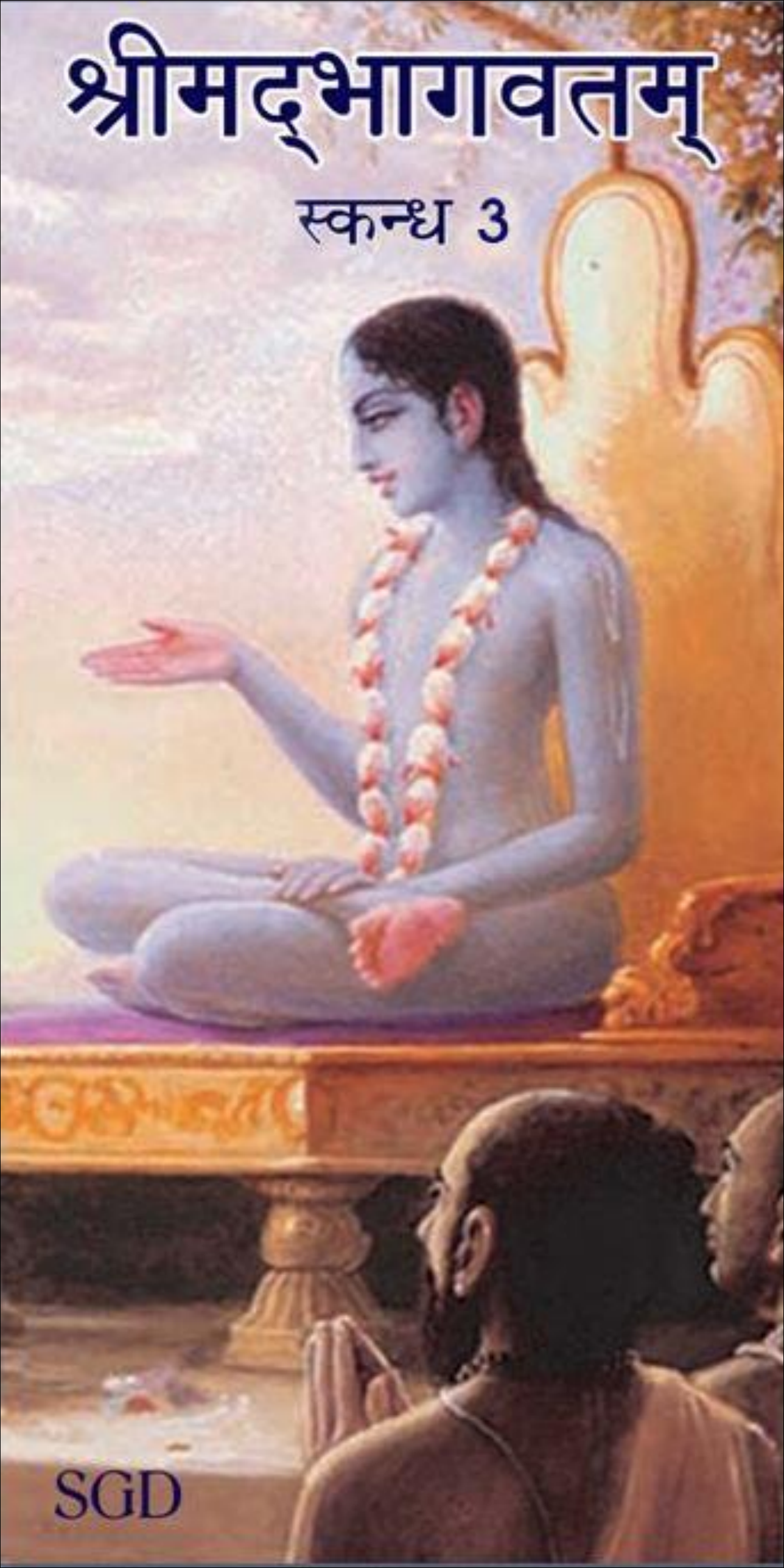

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 1

विदुर द्वारा पूछे गये प्रश्न

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: शुकदेव गोस्वामी ने कहा : अपना समृद्ध घर त्याग कर जंगल में प्रवेश करके महान् भक्त राजा विदुर ने अनुग्रहकारी मैत्रेय ऋषि से यह प्रश्न पूछा।

श्लोक 2: पाण्डवों के रिहायशी मकान के विषय में और क्या कहा जा सकता है? सबों के स्वामी श्रीकृष्ण तुम लोगों के मंत्री बने। वे उस घर में इस तरह प्रवेश करते थे मानो वह उन्हीं का अपना घर हो और वे

दुर्योधन के घर की ओर कोई ध्यान ही नहीं देते थे।

श्लोक 3: राजा ने शुकदेव गोस्वामी से पूछा : सन्त विदुर तथा अनुग्रहकारी मैत्रेय मुनि के बीच कहाँ और कब यह भेंट हुई तथा विचार-विमर्श हुआ? हे प्रभु, कृपा करके यह कहकर मुझे कृतकृत्य करें।

श्लोक 4: सन्त विदुर भगवान् के महान् एवं शुद्ध भक्त थे, अतएव कृपालु ऋषि मैत्रेय से पूछे गये उनके प्रश्न अत्यन्त सार्थक, उच्चस्तरीय तथा विद्वन्मण्डली द्वारा अनुमोदित रहे होंगे।

श्लोक 5: श्री सूत गोस्वामी ने कहा : महर्षि शुकदेव गोस्वामी अत्यन्त अनुभवी थे और राजा से प्रसन्न थे। अत: राजा द्वारा प्रश्न किये जाने पर उन्होंने उससे कहा; "कृपया इस विषय को ध्यानपूर्वक सुनें।"

श्लोक 6: श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा : राजा धृतराष्ट्र अपने बेईमान पुत्रों का पालन-पोषण करने की अपवित्र इच्छाओं के वश में होकर अन्तर्दृष्टि खो चुका था और उसने अपने पितृविहीन भतीजों, पाण्डवों को जला डालने के लिए लाक्षागृह में आग लगा दी।

श्लोक 7: (इस) राजा ने अपने पुत्र दु:शासन द्वारा देवतुल्य राजा युधिष्ठिर की पत्नी द्रौपदी के बाल खींचने के निन्दनीय कार्य के लिए मना नहीं किया, यद्यपि उसके अश्रुओं से उसके वक्षस्थल का कुंकुम तक धुल गया था।

श्लोक 8: युधिष्ठिर, जो कि अजातशत्रु हैं, जुए में छलपूर्वक हरा दिये गये। किन्तु सत्य का व्रत लेने के कारण वे जंगल चले गये। समय पूरा होने पर जब वे वापस आये और जब उन्होंने साम्राज्य का अपना उचित भाग वापस करने की याचना की तो

मोहग्रस्त धृतराष्ट्र ने देने से इनकार कर दिया।

श्लोक 9: अर्जुन ने श्रीकृष्ण को जगद्गुरु के रूप में (धृतराष्ट्र की) सभा में भेजा था और यद्यपि उनके शब्द कुछेक व्यक्तियों (यथा भीष्म) द्वारा शुद्ध अमृत के रूप में सुने गये थे, किन्तु जो लोग पूर्वजन्म के पुण्यकर्मों के लेशमात्र से भी वंचित थे उन्हें वे वैसे नहीं लगे। राजा (धृतराष्ट्र या दुर्योधन) ने कृष्ण के शब्दों को गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया।

श्लोक 10: जब विदुर अपने ज्येष्ठ भ्राता (धृतराष्ट्र) द्वारा मंत्रणा के लिए बुलाये गये तो वे राजमहल में प्रविष्ट

हुए और उन्होंने ऐसे उपदेश दिये जो उपयुक्त थे। उनका उपदेश सर्वविदित है और राज्य के दक्ष मन्त्रियों द्वारा अनुमोदित है।

श्लोक 11: [विदुर ने कहा] तुम्हें चाहिए कि युधिष्ठिर को उसका न्यायोचित भाग लौटा दो, क्योंकि उसका कोई शत्रु नहीं है और वह तुम्हारे अपराधों के कारण अकथनीय कष्ट सहन करता रहा है। वह अपने छोटे भाइयों सहित प्रतीक्षारत है जिनमें से प्रतिशोध की भावना से पूर्ण भीम सर्प की तरह उच्छवास ले रहा है। तुम निश्चय ही उससे भयभीत हो।

श्लोक 12: भगवान् कृष्ण ने पृथा के पुत्रों को अपना परिजन मान लिया है और संसार के सारे राजा श्रीकृष्ण के साथ हैं। वे अपने घर में अपने समस्त पारिवारिक जनों, यदुकुल के राजाओं तथा राजकुमारों के साथ, जिन्होंने असंख्य शासकों को जीत लिया है, उपस्थित हैं और वे उन सबों के स्वामी हैं।

श्लोक 13: तुम साक्षात् अपराध रूप दुर्योधन का पालन-पोषण अपने अच्युत पुत्र के रूप में कर रहे हो, किन्तु वह भगवान् कृष्ण से ईर्ष्या करता है। चूँकि तुम इस तरह से कृष्ण के अभक्त का पालन कर रहे हो,

अतएव तुम समस्त शुभ गुणों से विहीन हो। तुम यथाशीघ्र इस दुर्भाग्य से छुटकारा पा लो और सारे परिवार का कल्याण करो।

श्लोक 14: विदुर जिनके चरित्र का सभी सम्मानित व्यक्ति आदर करते थे, जब इस तरह बोल रहे थे तो दुर्योधन द्वारा उनको अपमानित किया गया। दर्योधन क्रोध के मारे फूला हुआ था और उसके होंठ फडक़ रहे थे। दुर्योधन कर्ण, अपने छोटे भाइयों तथा अपने मामा शकुनी के साथ था।

श्लोक 15: “इस रखैल के पुत्र को यहाँ आने के लिए किसने कहा है? यह इतना कुटिल है कि जिनके बल पर यह बड़ा हुआ है उन्हीं के विरुद्ध शत्रु-हित में गुप्तचरी करता है। इसे तुरन्त इस महल से निकाल बाहर करो और इसकी केवल साँस भर चलने दो।”

श्लोक 16: इस तरह अपने कानों से होकर वाणों द्वारा बेधे गये और अपने हृदय के भीतर मर्माहत विदुर ने अपना धनुष दरवाजे पर रख दिया और अपने भाई के महल को छोड़ दिया। उन्हें कोई खेद नहीं था, क्योंकि

वे माया के कार्यों को सर्वोपरि मानते थे।

श्लोक 17: अपने पुण्य के द्वारा विदुर ने पुण्यात्मा कौरवों के सारे लाभ प्राप्त किये। उन्होंने हस्तिनापुर छोड़ने के बाद अनेक तीर्थस्थानों की शरण ग्रहण की जो कि भगवान् के चरणकमल हैं। उच्चकोटि का पवित्र जीवन पाने की इच्छा से उन्होंने उन पवित्र स्थानों की यात्रा की जहाँ भगवान् के हजारों दिव्य रूप स्थित हैं।

श्लोक 18: वे एकमात्र कृष्ण का चिन्तन करते हुए अकेले ही विविध पवित्र स्थानों यथा अयोध्या, द्वारका

तथा मथुरा से होते हुए यात्रा करने निकल पड़े। उन्होंने ऐसे स्थानों की यात्रा की जहाँ की वायु, पर्वत, बगीचे, नदियाँ तथा झीलें शुद्ध तथा निष्पाप थीं और जहाँ अनन्त के विग्रह मन्दिरों की शोभा बढ़ाते हैं। इस तरह उन्होंने तीर्थयात्रा की प्रगति सम्पन्न की।

श्लोक 19: इस तरह पृथ्वी का भ्रमण करते हुए उन्होंने भगवान् हरि को प्रसन्न करने के लिए कृतकार्य किये। उनकी वृत्ति शुद्ध एवं स्वतंत्र थी। वे पवित्र स्थानों में स्नान करके निरन्तर शुद्ध होते रहे, यद्यपि वे अवधूत वेश में थे—न तो उनके बाल सँवरे हुए थे न ही लेटने के लिए उनके

पास बिस्तर था। इस तरह वे अपने तमाम परिजनों से अलक्षित रहे।

श्लोक 20: इस तरह जब वे भारतवर्ष की भूमि में समस्त तीर्थस्थलों का भ्रमण कर रहे थे तो वे प्रभास क्षेत्र गये। उस समय महाराज युधिष्ठिर सम्राट थे और वे सारे जगत को एक सैन्य शक्ति तथा एक ध्वजा के अन्तर्गत किये हुए थे।

श्लोक 21: प्रभास तीर्थ स्थान में उन्हें पता चला कि उनके सारे सम्बन्धी उग्र आवेश के कारण उसी तरह मारे जा चुके हैं जिस तरह बाँसों के घर्षण से उत्पन्न अग्नि सारे जंगल को जला देती है। इसके बाद वे पश्चिम

की ओर बढ़ते गये जहाँ सरस्वती नदी बहती है।

श्लोक 22: सरस्वती नदी के तट पर ग्यारह तीर्थस्थल थे जिनके नाम हैं (१) त्रित (२) उशना (३) मनु (४) पृथु (५) अग्नि (६) असित (७) वायु (८) सुदास (९) गो (१०) गुह तथा (११) श्राद्धदेव। विदुर इन सबों में गये और ठीक से कर्मकाण्ड किये।

श्लोक 23: वहाँ महर्षियों तथा देवताओं द्वारा स्थापित किये गये पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु के विविध रूपों से युक्त अनेक अन्य मन्दिर भी थे। ये मन्दिर भगवान् के प्रमुख प्रतीकों से अंकित थे और आदि

भगवान् श्रीकृष्ण का सदैव स्मरण कराने वाले थे।

श्लोक 24: तत्पश्चात् वे अत्यन्त धनवान प्रान्तों यथा सूरत, सौवीर और मत्स्य से होकर तथा कुरुजांगल नाम से विख्यात पश्चिमी भारत से होकर गुजरे। अन्त में वे यमुना के तट पर पहुँचे जहाँ उनकी भेंट कृष्ण के महान् भक्त उद्धव से हुई।

श्लोक 25: तत्पश्चात् अत्यधिक प्रेम तथा अनुभूति के कारण विदुर ने भगवान् कृष्ण के नित्य संगी तथा बृहस्पति के पूर्व महान् शिष्य उद्धव का आलिंगन किया। तत्पश्चात् विदुर ने

भगवान् कृष्ण के परिवार का समाचार पूछा।

श्लोक 26: [कृपया मुझे बतलाएँ] कि (भगवान् की नाभि से निकले कमल से उत्पन्न) ब्रह्मा के अनुरोध पर अवतरित होने वाले दोनों आदि भगवान्, जिन्होंने हर व्यक्ति को ऊपर उठा कर सम्पन्नता में वृद्धि की है, शूरसेन के घर में ठीक से तो रह रहे हैं?

श्लोक 27: [कृपया मुझे बताएँ] कि कुरुओं के सबसे अच्छे मित्र हमारे बहनोई वसुदेव कुशलतापूर्वक तो हैं? वे अत्यन्त दयालु हैं। वे अपनी बहनों के प्रति पिता के तुल्य हैं और अपनी

पत्नियों के प्रति सदैव हँसमुख रहते हैं।

श्लोक 28: हे उद्धव, मुझे बताओ कि यदुओं का सेनानायक प्रद्युम्न, जो पूर्वजन्म में कामदेव था, कैसा है? रुक्मिणी ने ब्राह्मणों को प्रसन्न करके उनकी कृपा से भगवान् कृष्ण से अपने पुत्र रुपमें उसे उत्पन्न किया था।

श्लोक 29: हे मित्र, (मुझे बताओ) क्या सात्वतों, वृष्णियों, भोजों तथा दाशार्हों के राजा उग्रसेन अब कुशल-मंगल तो हैं? वे अपने राजसिंहासन की सारी आशाएँ त्यागकर अपने

साम्राज्य से दूर चले गये थे, किन्तु भगवान् कृष्ण ने पुन: उन्हें प्रतिष्ठित किया।

श्लोक 30: हे भद्रपुरुष, साम्ब ठीक से तो है? वह भगवान् के पुत्र सदृश ही है। पूर्वजन्म में वह शिव की पत्नी के गर्भ से कार्तिकेय के रूप में जन्मा था और अब वही कृष्ण की अत्यन्त सौभाग्यशालिनी पत्नी जाम्बवती के गर्भ से उत्पन्न हुआ है।

श्लोक 31: हे उद्धव, क्या युयुधान कुशल से? उसने अर्जुन से सैन्य कला की जटिलताएँ सीखीं और उस दिव्य गन्तव्य को प्राप्त किया जिस

तक बड़े-बड़े संन्यासी भी बहुत कठिनाई से पहुँच पाते हैं।

श्लोक 32: कृपया मुझे बताएँ कि श्वफल्क पुत्र अक्रूर ठीक से तो है? वह भगवान् का शरणागत एक दोषरहित आत्मा है। उसने एक बार दिव्य प्रेम-भाव में अपना मानसिक सन्तुलन खो दिया था और उस मार्ग की धूल में गिर पड़ा था जिसमें भगवान् कृष्ण के पदचिन्ह अंकित थे।

श्लोक 33: जिस तरह सारे वेद याज्ञिक कार्यों के आगार हैं उसी तरह राजा देवक-भोज की पुत्री ने देवताओं की माता के ही सदृश भगवान् को

अपने गर्भ में धारण किया। क्या वह (देवकी) कुशल से है?

श्लोक 34: क्या मैं पूछ सकता हूँ कि अनिरुद्ध कुशलतापूर्वक है? वह शुद्ध भक्तों की समस्त इच्छाओं की पूर्ति करने वाला है और प्राचीन काल से ऋग्वेद का कारण, मन का स्रष्टा तथा विष्णु का चौथा स्वांश माना जाता रहा है।

श्लोक 35: हे भद्र पुरुष, अन्य लोग, यथा हृदीक, चारुदेष्ण, गद तथा सत्यभामा का पुत्र जो श्रीकृष्ण को अपनी आत्मा के रूप में मानते हैं और बिना किसी विचलन के उनके

मार्ग का अनुसरण करते हैं-ठीक से तो हैं?

श्लोक 36: अब मैं पूछना चाहूँगा कि महाराज युधिष्ठिर धार्मिक सिद्धान्तों के अनुसार तथा धर्मपथ के प्रति सम्मान सहित राज्य का पालन-पोषण कर तो रहे हैं? पहले तो दुर्योधन ईर्ष्या से जलता रहता था, क्योंकि युधिष्ठिर कृष्ण तथा अर्जुन रूपी दो बाहुओं के द्वारा रक्षित रहते थे जैसे वे उनकी अपनी ही भुजाएँ हों।

श्लोक 37: [कृपया मुझे बताएँ] क्या विषैले सर्प तुल्य एवं अजेय भीम ने पापियों पर अपना दीर्घकालीन क्रोध बाहर निकाल दिया है? गदा-

चालन के उसके कौशल को रण-भूमि भी सहन नहीं कर सकती थी, जब वह उस पथ पर चल पड़ता था।

श्लोक 38: [कृपया मुझे बताएँ] कि अर्जुन, जिसके धनुष का नाम गाण्डीव है और जो अपने शत्रुओं का विनाश करने में रथियों में सदैव विख्यात है, ठीक से तो है? एक बार उसने न पहचाने जानेवाले छद्म शिकारी के रूप में आये हुए शिवजी को बाणों की बौछार करके उन्हें तुष्ट किया था।

श्लोक 39: क्या अपने भाइयों के संरक्षण में रह रहे जुड़वाँ भाई कुशल पूर्वक हैं? जिस तरह आँख पलक

द्वारा सदैव सुरक्षित रहती है उसी तरह वे पृथा पुत्रों द्वारा संरक्षित हैं जिन्होंने अपने शत्रु दुर्योधन के हाथों से अपना न्यायसंगत साम्राज्य उसी तरह छीन लिया है, जिस तरह गरुड़ ने वज्रधारी इन्द्र के मुख से अमृत छीन लिया था।

श्लोक 40: हे स्वामी, क्या पृथा अब भी जीवित है? वह अपने पितृविहीन बालकों के निमित्त ही जीवित रही अन्यथा राजा पाण्डु के बिना उसका जीवित रह पाना असम्भव था, जो कि महानतम सेनानायक थे और जिन्होंने अकेले

ही अपने दूसरे धनुष के बल पर चारों दिशाएँ जीत ली थीं।

श्लोक 41: हे भद्रपुरुष, मैं तो एकमात्र उस (धृतराष्ट्र) के लिए शोक कर रहा हूँ जिसने अपने भाई की मृत्यु के बाद उसके प्रति विद्रोह किया। उसका निष्ठावान हितैषी होते हुए भी उसके द्वारा मैं अपने घर से निकाल दिया गया, क्योंकि उसने भी अपने पुत्रों के द्वारा अपनाए गये मार्ग का ही अनुसरण किया था।

श्लोक 42: अन्यों द्वारा अलक्षित रहकर विश्वभर में भ्रमण करने के बाद मुझे इस पर कोई आश्चर्य नहीं हो रहा। भगवान् के कार्यकलाप जो इस

मर्त्यलोक के मनुष्य जैसे हैं, अन्यों को मोहित करने वाले हैं, किन्तु भगवान् की कृपा से मैं उनकी महानता को जानता हूँ, अतएव मैं सभी प्रकार से सुखी हूँ।

श्लोक 43: (कृष्ण) भगवान् होते हुए भी तथा पीड़ितों के दुख को सदैव दूर करने की इच्छा रखते हुए भी, वे कुरुओं का वध करने से अपने को बचाते रहे, यद्यपि वे देख रहे थे कि उन लोगों ने सभी प्रकार के पाप किये हैं और यह भी देख रहे थे कि, अन्य राजा तीन प्रकार के मिथ्या गर्व के वश में होकर अपनी प्रबल सैन्य

गतिविधियों से पृथ्वी को निरन्तर क्षुब्ध कर रहे हैं।

श्लोक 44: भगवान् का प्राकट्य दुष्टों का संहार करने के लिए होता है। उनके कार्य दिव्य होते हैं और समस्त व्यक्तियों के समझने के लिए ही किये जाते हैं। अन्यथा, समस्त भौतिक गुणों से परे रहने वाले भगवान् का इस पृथ्वी में आने का क्या प्रयोजन हो सकता है?

श्लोक 45: अतएव हे मित्र, उन भगवान् की महिमा का कीर्तन करो जो तीर्थस्थानों में महिमामंडित किये जाने के निमित्त हैं। वे अजन्मा हैं फिर भी ब्रह्माण्ड के सभी भागों के

शरणागत शासकों पर अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा वे प्रकट होते हैं। उन्हीं के हितार्थ वे अपने शुद्ध भक्त यदुओं के परिवार में प्रकट हुए।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव